प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान ग्रन्थमाला—४

ऋग्वेद की ऋक्संख्या

लेखक—

युधिष्ठिर मीमांसक

प्रकाशक—

आर्य साहित्य मण्डल लि०, अजमेर

मुद्रक—

दी फाइन आर्ट प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर

पौष सं० २००६

मूल्य

S
294.111
M 651 R

S
294.111
M651R

प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान के उद्देश्य

"भारतीय प्राचीन वाङ्मय का अन्वेषण, रक्षण और प्रसार"

लेखक का निवेदन

यह लेख मूल रूप में अन्यत्र सन् १९४५, ४६ में प्रकाशित हो चुका था, परन्तु इन वर्षों में स्वाध्याय से इस विषय पर कुछ नया प्रकाश पड़ा, तदनुसार उस में उचित संशोधन, परिवर्तन तथा परिवर्धन करके उसे प्रयाग की "सरस्वती" पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेजा। वह उसके जुलाई, अगस्त और सितम्बर सन् १९४९ के अङ्कों में प्रकाशित हुआ। इस लेख को पढ़ कर अनेक मित्रों ने मुझ से इस लेख की प्रतियां मांगी। मेरे पास इस की कोई अतिरिक्त कापी नहीं थी, अतः मैंने इस लेख को पुस्तकाकार प्रकाशित करना आवश्यक समझा। अस्तु

आशा है इस लेख से ऋग्वेद की ऋक्संख्या के विषय में जो अनेक भ्रम और मत-भेद फैल रहे हैं, उनका उचित समाधान होगा और ऋग्वेद की वास्तविक ऋक्संख्या का बोध होगा।

अन्त में वेदज्ञ विद्वानों से निवेदन है कि उन्हें इस लेख में यदि कोई भूल ज्ञात हो तो निःसंकोच पत्र द्वारा प्रकट करने की कृपा करें, जिस से अगले संस्करण में उस का परिमार्जन हो सके।

39936
23.6.72

प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान
श्रीनगर रोड़, अजमेर
पौष शुक्ला १ सं० २००

विदुषां वशंवदः—
युधिष्ठिर मीमांसक

Library IIAS, Shimla
S 294.111 M 651 R
00039936

ऋग्वेद की ऋक्संख्या

ऋग्वेद में कितनी ऋचाएँ हैं, इस विषय में प्राचीन अर्वाचीन अनेक विद्वानों ने लिखा है, परन्तु यह प्रश्न अभी तक रहस्यमय बना हुआ है। किन्हीं भी दो विद्वानों की ऋग्गणना परस्पर नहीं मिलती[1]। हमारा मत है कि प्राचीन आचार्यों की ऋग्गणना प्रायः ठीक है, परन्तु उनके गणनाप्रकार में भेद होने से परस्पर विभिन्नता प्रतीत होती है। आधुनिक विद्वानों ने प्राचीन आचार्यों के गणना-प्रकार को भले प्रकार न समझ कर अनेक भयङ्कर भूलें की हैं। इस लेख में उनकी भूलों का निदर्शन और ऋग्वेद की शुद्ध ऋक्संख्या दर्शाने का प्रयत्न किया जाएगा।

शतपथ ब्राह्मण १०।४।२।२३ में लिखा है—

स ऋचो व्यौहत द्वादश बृहती सहस्राणि, एतावत्यो ह्यृचो याः प्रजापतिसृष्टाः।

अर्थात्—प्रजापति ने १२००० सहस्र बृहती छन्द के परिमाण की ऋचाएँ उत्पन्न कीं। इतनी ही प्रजापतिसृष्ट ऋचाएँ हैं।

बारह सहस्र बृहती छन्द का १२००० × ३६ = ४३२००० अक्षर-परिमाण होता है।

शतपथ के इस प्रकरण को भले प्रकार देखने से विदित होता है कि यह अक्षर-परिमाण केवल ऋग्वेद की ऋचाओं का नहीं है, अपितु वेदचतुष्टयान्तर्गत समस्त ऋचाओं का है, क्योंकि शतपथ के इस प्रकरण में त्रयी विद्या का वर्णन करते हुए ऋक्, यजुः और साम का ही परिमाण दर्शाया है, अथर्व का नहीं। अतः इस प्रकार के ऋक्, यजुः और साम शब्द ग्रन्थ-विशेष के वाचक न होकर मन्त्रप्रकार के वाचक हैं। आचार्य जैमिनि ने त्रयी विद्या के लिए प्रयुक्त होनेवाले ऋक्, यजुः और साम शब्द का अर्थ इस प्रकार दर्शाया है—

---

१. शौनकीय अनुवाकानुक्रमणी १०५८० और १ पाद। छन्दसंख्या-परिशिष्ट—१०४०२। ऋक्सर्वानुक्रमणी-टीकाकार जगन्नाथ १०५५२। चरणव्यूह-टीकाकार महिदास—बालखिल्यसहित १०५५२, बालखिल्य-विना १०४७२, उसके द्वारा उद्धृत श्लोकानुसार १०४१६। वेङ्कट-माधव—१०४०२ तथा १०४८०। स्वामी दयानन्द सरस्वती १०५२१ तथा १०५८६। प्रो० मैकडानल १०४४२, द्विपदापक्ष में—१०५६६ तथा ८-८-१९१६ के पत्रानुसार १०५६५। पं० सत्यव्रत सामश्रमी—१०५२२। पं० हरिप्रसाद १०४४०।

यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था सा ऋक्। गीतिषु सामाख्या। शेषे यजुः शब्दः। मीमांसा २।१।३५-३७ ॥

अर्थात् चारों वेदों में जितने पादबद्ध (पद्यमय) मन्त्र हैं वे 'ऋक्', गानात्मक 'साम' और गद्य मन्त्र 'यजुः' कहाते हैं।

आचार्य शौनक ने अनुवाकानुक्रमणी के अन्त में ऋग्वेद की ऋचाओं का ४३२००० अक्षर-परिमाण बताया है। इस अक्षर-परिमाण से पूर्व अनुवाकानुक्रमणी में लिखा है—

"ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिः पादश्च पारणं संप्रकीर्तितम् ॥

अर्थात् ऋग्वेद के पारायण में समस्त ऋचाओं का परिमाण १०५८० और १ पाद है।

किन्हीं किन्हीं विद्वानों का विचार है कि अनुवाकानुक्रमणी में लिखा हुआ ४३२००० अक्षर-परिमाण ऋग्वेद की समस्त शाखाओं में पठित १०५८० और १पाद ऋचाओं का है। हमें यह कल्पना ठीक प्रतीत नहीं होती, क्योंकि बालखिल्य-रहित १०४७२ ऋचाओं का अक्षर-परिमाण ३९४२२१ होता है। यह अक्षरसंख्या पादपूर्त्यर्थ किए गये अक्षर-व्यूह को मानकर उपलब्ध होती है। अतः शेष १८० ऋचाओं और १ पाद का लगभग ३८ सहस्र अक्षर-परिमाण किसी प्रकार नहीं हो सकता। इस हेतु से भी शतपथोक्त ४३२००० अक्षर-परिमाण वेदचतुष्टयान्तर्गत समस्त पादबद्ध (पद्य) मन्त्रों का समझना चाहिए। शौनक ने केवल ऋग्वेद का ४३२००० अक्षर-परिमाण कैसे लिखा, यह हमें ज्ञात नहीं।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि शतपथ ब्राह्मण में ऋचाओं का द्वादश बृहती सहस्र (१२००० × ३६ = ४३२००० अक्षर) परिमाण लिखना और अनुवाकानुक्रमणी में ४३२००० अक्षर-परिमाण बताना ऋग्वेद की ऋक्संख्या जानने में कुछ भी सहायक नहीं हैं।

ऋग्वेद की विशिष्ट ऋग्गणना-पद्धति

ऋग्वेद की विभिन्न विद्वानों-द्वारा प्रदर्शित ऋक्संख्या पर विचार करने से पूर्व ऋग्वेद में ऋग्गणना की जो विशिष्ट पद्धति है, उसका समझ लेना अत्यावश्यक है, क्योंकि इस को यथार्थतया न समझने के कारण समस्त आधुनिक विद्वानों ने ऋग्गणना में भयङ्कर भूलें की हैं।

ऋग्गणना और द्विपदा ऋचाएँ

ऋग्वेद में कुछ मन्त्र ऐसे हैं, जिनको किसी समय दो-दो पाद का एक मन्त्र मानकर गिनते हैं और किसी समय उन्हें चार-चार पादों का एक मंत्र मानते हैं,

अर्थात् उस समय दो-दो द्विपात् मन्त्रों का एक चतुष्पाद मन्त्र माना जाता है। द्विपदा पक्ष में ऋग्वेद में समस्त १५७ द्विपदा ऋचाएँ हैं। इनमें से १७ नित्य द्विपदा ऋचाएँ हैं। शेष १४० द्विपदा ऋचाएँ नैमित्तिक हैं—अर्थात् ये १४० ऋचाएँ वस्तुतः द्विपदा नहीं हैं, अपितु १४०÷२=७० चतुष्पदा ऋचाएं हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में "द्विपदाः शंसति" आदि वाक्यों द्वारा ये ऋचाएँ द्विपदा बनाकर यज्ञ में विनियुक्त की जाती हैं। अत एव इन ७०×२=१४० ऋचाओं को "नैमित्तिक द्विपदा" कहा जाता है। इनके विषय में ऋक्सर्वानुक्रमणी के परिभाषा-प्रकरण में इस प्रकार लिखा है— "द्विर्द्विपदास्त्वृचः समामनन्ति।"

इस सूत्र की व्याख्या करता हुआ षड्गुरुशिष्य लिखता है—

"ऋचोऽध्ययने त्वध्येतारो द्वे द्वे द्विपदे एकैकामृचं कृत्वा समामनन्ति समामनेयुः अधीयीरन्। म्ना अभ्यासे, लिङर्थे लेट्, शपि मनादेशः। द्वे द्विपदे यासां ता ऋचो द्विर्द्विपदाः। समामनन्तीति वचनाच्छंसनादौ न भवन्ति, तेन 'पश्वा न तायुम्' (ऋ० १।६५) इति शंसने दशर्चत्वम्, आसां चाध्ययने तु पञ्चत्वं भवति।

अर्थात्—ऋचाओं के अध्ययनकाल में अध्येता दो-दो द्विपदाओं को एक-एक ऋचा बनाकर अभ्यास करें। 'समामनन्ति' कहने से यज्ञान्तर्गत शंसन (स्तुति) काल में दो द्विपदाओं की एक ऋचा नहीं होती है। इसलिये "पश्वा न तायुम्" (ऋ० १।६५) सूक्त शंसनकाल में दश ऋचाओं का माना जाता है और ये ही दस ऋचाएँ अध्ययनकाल में पाँच मानी जाती हैं।

सायणाचार्य ने ऋ० १।६५ के भाष्य में लिखा है—

तत्र पश्वेत्यादीनि षट् सूक्तानि द्वैपदानि। तेष्वध्ययनसमये द्विपदे द्वे द्वे ऋचौ चतुष्पदामेकैकां कृत्वा समाम्नायते। अयुतसंख्यासु तु याऽन्यातिरिच्यते सा तथैवाम्नायते। प्रायेणार्थोऽपि द्वयोर्द्विपदयोरक एव, प्रयोगे तु ताः पृथक् पृथक् शंसनीयाः। सूच्यते हि—पश्वा न तायुम् (ऋ० १। ६५) इति द्वैपदम् (आश्व० ८।१२) इति।

अर्थात्—'पश्वा' (ऋ० १।६५—७०) इत्यादि छः सूक्त द्वैपद हैं। उनमें अध्ययन-काल में दो-दो द्विपदाओं की एक-एक चतुष्पदा ऋचा बनाकर पढ़ी जाती है। जिस सूक्त में विषम संख्यावाली द्विपदाएँ हैं, उसमें जो अन्तिम द्विपदा शेष रह जाती है, वह द्विपदारूप में ही पढ़ी जाती है। अर्थ भी प्रायः दो-दो द्विपदाओं का एक ही है। प्रयोग अर्थात् यज्ञकाल में उनका पृथक्-पृथक् द्विपदारूप में ही शंसन होता है। आश्वलायन श्रौत (८।१) में भी 'पश्वा न' (ऋ० १।६५) सूक्त द्विपदारूप से विनियुक्त है।

चरणव्यूह के टीकाकार महिदास ने भी लिखा है—

हवन एकैका अध्ययने द्वे द्वे आमनन्ति । पृष्ठ १९[1] ।

अर्थात् हवनकाल में एक एक द्विपदा पढ़ी जाती है और अध्ययनकाल में दो दो द्विपदाएँ [एक ऋचा मानी जाती हैं]।

यहाँ यह बात विशेषरूप से ध्यान में रखनी चाहिए कि कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में जो प्रतिसूक्त मन्त्रसंख्या लिखी है, उसमें उसने १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदा ऋचा मानकर ही गणना की है। अतः कात्यायन के मत में 'पश्वा न तायुम्' (ऋ० १।६५) सूक्त दशर्च ही है। मैक्समूलर के ऋक्संस्करण तथा तदाश्रित छपे हुए अजमेर आदि के संस्करणों में इस सूक्त में १० द्विपदाओं को ५ चतुष्पदा ऋचाएँ बनाकर छापा है।

नैमित्तिक द्विपदाओं का संकलन

ऋग्वेद में जो १४० नैमित्तिक द्विपदाएं हैं, उनका संग्रह चरणव्यूह के टीकाकार महीदास ने निम्न प्रकार दशाया है—

पश्वा न तायुम् (ऋ० १।६५।१-१०) दश, रयिं (ऋ० १।६६।१-१०) दश, वनेषु (ऋ० १।६७।१-१०) दश, श्रीणान् (ऋ० १।६८।१-१०) दश, शुक्रः शुक्रैतु शुक्रान् (ऋ० १।६९।१-१०), दश, वनेम पर्वीः (ऋ० १।७०।१-१०) दश, अग्ने त्वं नः (ऋ० ५।२४।१-४) चत्वारि, अग्ने भव (ऋ० ७।१७।१-६) षट्, प्र शुक्रैतु (ऋ० ७।३४।१-१०) दश, राजा राष्ट्राणां (ऋ० ७।३४।११-२०) दश, क ईं व्यक्ता (ऋ० ७।५६।१-१०) दश, बभ्रवे (ऋ० ८।२९।१-१०) दश, परि प्र धन्व (ऋ० ९।१०९।१-१०) दश, त ते सोतारः (ऋ०९।१०९।११-२२) द्वादश, इमा नु कं (ऋ०१०।१५७।१-४) चत्वारि, आ याहि वनसा (ऋ० १०।१७२।१-४) चत्वारि इति नैमित्तिकद्विपदाश्चत्वारिंशोत्तरशतमिति (१०४)। चरणव्यूह टीका पृष्ठ १८ ।

इनके अतिरिक्त १७ नित्य द्विपदाओं का उल्लेख उपलेख सूत्र (वर्ग ६।१-२) में मिलता है।

इस प्रकार ऋग्वेद में समस्त १७+१४०=१५७ नित्य-नैमित्तिक द्विपदा ऋचाएं हैं। आचार्य कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में प्रतिसूक्त जो ऋक्संख्या लिखी है, उसमें इन १४० नैमित्तक द्विपदाओं को द्विपदा मानकर ही गिना है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं।

मैक्समूलर का ऋक्संस्करण और द्विपदा ऋचाएं

मैक्समूलर ने सन् १८७३ में ऋग्वेदमूल का प्रथम संस्करण प्रकाशित किया था। यह संस्करण वस्तुतः उसके महान् परिश्रम का फल है, जो किसी भी

---

[1] यह पृष्ठसंख्या चौखम्बा संस्कृत सीरीज बनारस के छपे चरणव्यूह के अनुसार है।

सम्पादन-कलाभिज्ञ पाठक से छिपा नहीं है। इतना होते हुए भी निःसंकोच कहना पड़ेगा कि मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में कुछ भयङ्कर दोष रह गए हैं। उनमें सबसे महान् दोष नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं के मुद्रण में हुआ है, जिसके कारण उत्तरवर्ती अनेक विद्वानों से भयङ्कर भूलें हुईं।

मैक्समूलर ने अपने मूल ऋग्वेद के संस्करण में मं० १, सूक्त ६५–७० तक की ६० नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं को ३० चतुष्पदा ऋचा बनाकर छापा है, और प्रत्येक चतुष्पदा ऋचा पर मन्त्रसंख्या दी है[1]। पञ्चम मण्डल के २४ वें सूक्त की ४ चार द्विपदा ऋचाओं को दो-दो चतुष्पदा ऋचा बनाकर छापा है, परन्तु प्रथम के अन्त में १, २ और द्वितीय के अन्त में ३, ४ संख्या छापी है। शेष मण्डलों की अवशिष्ट ७६ नैमित्तिक द्विपदाओं का द्विपदारूप से ही मुद्रण किया है। इस प्रकार मैक्समूलर ने नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं के मुद्रण में तीन प्रकार आश्रित किए हैं। अर्थात् –

१—प्रथम मण्डल ६५–७० सूक्त की ६० नैमित्तिक द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापना और चतुष्पदा के अनुसार मन्त्रसंख्या देना।

२—पञ्चम मण्डल के २४ वें सूक्त की ४ नैमित्तिक द्विपदाओं को २ चतुष्पदा बनाकर छापना और उन पर द्विगुणित (द्विपदा के अनुसार) मन्त्रसंख्या देना।

३—शेष मण्डलों की ७६ नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदारूप में छापना।

सम्पादन-कला की दृष्टि से यह दोष अक्षम्य है। इससे यह भी विदित होता हैं कि मैक्समूलर को इन १४० नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं का वास्तविक स्वरूप समझ में नहीं आया था।

मैक्समूलर की उपर्युक्त भूल यदि उसके संस्करण तक ही सीमित रहती तो कुछ विशेष हानि नहीं थी, परन्तु उसके संस्करण को प्रामाणिक मानकर उत्तरवर्ती अनेक विद्वानों से भयङ्कर भूलें हुई हैं (जिनका हम इस लेख में यथास्थान निदर्शन कराएंगे)। अतः उसे किसी प्रकार क्षम्य नहीं कहा जा सकता।

अनुवाकानुक्रमणी और ऋक्संख्या

शौनक ने अपनी अनुवाकानुक्रमणी में दो स्थानों पर ऋक्संख्या का निर्देश

---

१. मैक्समूलर-सम्पादित ऋग्वेद सायण-भाष्य के द्वितीय संस्करण (सन् १८९०) में प्रति चतुष्पदा ऋचा के आगे दुगुनी संख्या (१ । २ ॥ ३ । ४ ॥ ५ । ६ ॥ इत्यादि) उपलब्ध होती है, जो ठीक है। सायणभाष्य के प्रथम संस्करण में मन्त्रसंख्या किस प्रकार छपी थी, यह हमें ज्ञात नहीं, क्योंकि हमें उसका प्रथम संस्करण देखने को प्राप्त नहीं हुआ।

किया है। श्लोक ४०, ४१, ४२ में वर्गसंख्या का निर्देश करता हुआ लिखता है—

"एकर्चं एकवर्गः (१) स्यादेकश्च (१) नवकस्तथा।
द्वौ (२) वर्गौ तु द्वयूचौ ज्ञेयौ न्यूनं तृचशतं (९७) स्मृतम् ॥ ४० ॥
चतुष्कं शतमेकं च चत्वारः ससप्ततिस्तथा (१७४)।
पञ्चानां सहस्रं तु द्वे च सप्तोत्तरे शते (१२०७) ॥ ४१ ॥
त्रीणि शतानि षट्कानां चत्वारिंशत् षट् च (३४६) वर्गाः।
शतमूनविंशतिः (११९) सप्तकानां न्यूना पष्टिर् (५९) अष्टकानाम् ॥४२॥

इन श्लोकों का स्पष्टीकरण इस प्रकार है—

प्रतिवर्ग ऋक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्त ऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	९७	=	२९१
४	×	१७४	=	६९६
५	×	१२०७	=	६०३५
६	×	३४६	=	२०७६
७	×	११९	=	८३३
८	×	५९	=	४७२
९	×	१	=	९
		२००६		१०४१७

तदनुसार ऋग्वेद में २००६ वर्ग और १०४१७ ऋचाएँ होती हैं। शौनक के मतानुसार यह ऋक्संख्या शाकल चरणान्तर्गत शैशिरीय शाखा की है। वह लिखता है—"तान् पारणे शाकले शैशिरीये वदन्ति" (३६)। इस संख्या में बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं हैं और नैमित्तिक द्विपदाओं का भी द्विपदा-रूप में परिगणन नहीं है। वर्तमान ऋग्वेद में बालखिल्य ऋचाओं को छोड़कर वर्गसंख्या २००६ ही है, परन्तु मन्त्रसंख्या १०४०२ है (यह हम आगे दर्शाएंगे)। इस प्रकार इसमें जो १५ ऋचाओं की अधिकता है[1], वह शाखाकृत समझनी चाहिए।

१. १५ संख्या का आधिक्य देखकर शैशिरि शाखा में संज्ञान सूक्त के समावेश की कल्पना नहीं करनी चाहिये, क्योंकि संज्ञानसूक्त का समावेश होने पर उसके चार वर्गों का भी वर्गसंख्या में समावेश होगा। वैसा होने पर वर्गसंख्या २००६ न होकर २०१० हो जायगी। अनुवाकानुक्रमणी में वर्गसंख्या २००६ ही लिखी है।

इसके आगे वह पूर्वोद्धृत 'ऋचां दश सहस्राणि' श्लोक पढ़ता है। तदनुसार ऋग्वेद में १०५८० ऋचाएं और १ पाद है। यद्यपि इन दोनों स्थानों पर कही हुई ऋक्संख्याओं में महती भिन्नता है, तथापि इसका समाधान बहुत साधारण है। 'ऋचां दश सहस्राणि' श्लोक में "पारणम्" पद विशेष ध्यान देने योग्य है। शौनक ने "पारणम्" शब्द-द्वारा १०५८० और १ पाद ऋक्परिमाण ऋग्वेद की समस्त शाखान्तर्गत ऋचाओं को दर्शाया है। यह लौगाक्षिस्मृति के निम्नलिखित श्लोकों के साथ तुलना करने पर स्पष्ट विदित हो जाता है। यथा—

"ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिपादश्च परायणविधौ खलु ॥
पूर्वोक्त संख्यायाश्चेत्तु सर्वशाखोक्तसूत्रगाः। मन्त्राश्चैव मिलित्वैव कथनं चेति पुनः पुनः॥

(श्री पं० भगवद्दत्त जी द्वारा 'वैदिक वाङ्मय का इतिहास' भाग १ पृष्ठ १३४ से उद्धृत।)

इन श्लोकों में १०५८० और १ पाद ऋक्परिमाण दर्शाकर स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि यह संख्या सर्वशाखोक्त मन्त्रों की है। यद्यपि इन श्लोकों का पाठ अत्यन्त भ्रष्ट है, तथापि उपर्युक्त अभिप्राय सर्वथा स्पष्ट है।

चरणव्यूह परिशिष्ट में लिखा है—

ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिः पादश्चैतत् पारायणमुच्यते ॥

महिदास १०५८० और १ पाद ऋक्संख्या की उपपत्ति इस प्रकार दर्शाता है—

अथाध्ययने ऋक्संख्योच्यते—षण्णवत्यधिकचतुःशतदशसहस्राणि १०४९६। ताः सहितनैमित्तिकद्विपदाश्चत्वारिंशोत्तरसहित (?, द्विपदाः षट्षष्ट्यधिकपञ्चशत) दश सहस्राणि १०५६६। संज्ञानमुशनावदत् सूक्तस्य पञ्चदशचैकीकृत्य १०५८०, एवं पारायणे ऋक्संख्या 'ऋचां दश सहस्राणि' इति वचनस्य संख्या पूर्णा भवति इत्यर्थः। एका उर्वरिता सा "भद्रन्नो अपि वाताय मनः" (१०।२०।१) इति पादाधिक्यमनुक्रमणिकावृत्तावप्युक्तेः। चरणव्यूह पृष्ठ २१, २२।

अर्थात्—अध्ययनकाल की १०५८० और एक पाद संख्या कहते हैं—१०४९६ ऋचाएं हैं, उन में नैमित्तिक द्विपदा की (अधिक ७०) संख्या जोड़ने पर १०५६६ ऋचाएं होती हैं। संज्ञान सूक्त की १५ ऋचाएं[1] मिलाने पर १०५८०

१—महिदास ने १०५८० और १ पाद संख्या की उपपत्ति में संज्ञान सूक्त की जो १५ ऋचायें गिनी हैं, वह ठीक नहीं, क्योंकि अनुवाकानुक्रमणी में संज्ञान सूक्त के विना ही १०४१७ मन्त्र कहे हैं। देखो पूर्व पृष्ठ ६।

संख्या पूरी हो जाती है, एक संख्या बचती है, वह है 'भद्रं नो अपि वाताय मनः' (१०।२०।१) एक पाद।

यहां पर महिदास ने १०४०२ ऋचाओं में ९४ संख्या अधिक जोड़ कर १०४९६ संख्या गिनी है। इस ९४ संख्या की उपपत्ति इस प्रकार है—

ऋग्वेद में ९४ ऋचाएं ऐसी हैं जिनमें तीन-तीन अर्धर्चे हैं[१]। अध्ययन-काल में उनके दो अर्धर्च की एक ऋचा और एक अर्धर्च की एक ऋचा गिनी जाती है। इस प्रकार ९४ ऋक्संख्या की वृद्धि हो जाती है।

छन्दःसंख्या-परिशिष्ट और ऋग्गणना

ऋग्वेद की किसी शाखा का छन्दःसंख्यासंज्ञक एक प्राचीन परिशिष्ट उपलब्ध होता है। इसमें केवल ११ श्लोक हैं। प्रारम्भ के दस श्लोकों में गायत्र्यादि पृथक् पृथक् छन्दों के अनुसार ऋक्संख्या का उल्लेख किया है। तत्पश्चात् अन्तिम श्लोक में सामूहिक रूप से ऋक्संख्या का निर्देश है। वे श्लोक इस प्रकार हैं—

"एकपञ्चाशद् ऋग्वेदे गायत्र्यः शाकलेयके। सहस्रद्वितयं चैव चत्वार्येव शतानि तु ॥१॥
त्रीणि शतानि सैकानि चत्वारिंशत्तथोष्णिहः। अनुष्टुभां शतान्यष्टौ पञ्चाशत् पञ्चसंयुता॥२॥
बृहतीनां शतं ज्ञेयमेकाशीत्यधिकं बुधैः। शतानि त्रीणि षड्क्तीनां द्वादशाभ्यधिकानि तु ॥३॥

---

१. महिदास ने उनका परिगणन इस प्रकार दर्शाया है—आसां परिगणनमाह—'अग्निं होतारम्' (अष्ट० २, अ० १, वर्ग १२, इसी प्रकार आगे भी समझें) पञ्च, 'सं हि शर्धो न' (२।१।१३) षड्, 'अयं जायत' (२।१।१४) पञ्च, 'विश्वो विहायाः' (२।१।१५) तिस्रः, 'यं त्वं रथम्' (२।१।१६) पञ्च, प्र तद् वोचेयम्' (२।१।१७) षट्, 'इन्द्र पाह्युप नः' (२।१।१८) पञ्च, 'इमां ते वाचम्' (२।१।१९) चत्वारि, 'स नो नव्येभि' (२।१।१९) वर्जम्। 'इन्द्राय हि द्यौः (२।१।२०) सप्त, 'त्वया वयम्' (२।१।२१) षट्, अवर्म ह' (२।१।२२) एका, 'वनोति हि' (२।१।२२) एका, 'आ त्वा जुवो' (२।१।२३) षट्, 'स्तीर्णम्' (२।१।२४) पञ्च, 'इमे वां सोमा' (२।१।२५) एका 'इमे ये ते सु वायो वा' (२।१।२५) एका, प्र सुज्येष्ठम् (२।१।२६) षट्, 'ऊती देवानाम्' (२।१।२६) वर्जम्। 'सुषुमायातम्' (२।२।१) त्रीणि, 'प्र प्र पूष्णः' (२।२।२) चतुष्कम्, 'अस्तु श्रौ-षट्, (२।२।३) चत्वारि, 'शचीभिर्नः' (२।२।३) वर्जम्। 'वृषन्निन्द्रु' (२।२।४) पञ्च, 'ये देवासो' (२।२।४) वर्जम्। 'तवत्यन्नर्यम्' (२।६।२८) एका, 'सखे सखायम्' (३।४।१२) एका, 'अया रुचा' (७।५।२३) त्रीणि, एतास्त्रीणि त्रीणयर्धर्चा ऋचा इवनीयाश्चतुर्नवति-संख्या। इति त्रीण्यर्धच ऋग्घवने। अध्ययने अर्धर्चं द्वयेन ऋगेका, अर्धचेनैकैव ऋग्द्वये कर्तव्य इत्यर्थः। चरणव्यूह पृष्ठ १९, २०।

पञ्चाशत् त्रिष्टुभः प्रोक्तास्तिस्रश्चैव ततोऽधिकाः। सहस्राण्येव चत्वारि विज्ञेयं तु शतद्वयम्॥४
चत्वारिंशत् तथाष्टौ च तथा चापि शतत्रयम्। जगतीनामियं संख्या सहस्रं तु प्रकीर्तितम्॥५
दशैवात्यतिजगत्योऽपि तथा सप्त न संशयः। शक्वर्योऽपि तथैवोक्तास्तथा नव विचक्षणैः॥६
नव चैवातिशक्वर्यः षडष्टयः प्रकीर्तिताः। अशीतिश्च चतस्रश्च तथात्यष्टिऋचः स्मृताः॥७
धृतिद्वयं विनिर्दिष्टमेकातिधृतिरेव च। एकपदास्तु षट् प्रोक्ता द्विपदा दश सप्त च॥८॥
प्रगाथा बार्हता येऽत्र तेषां शतमुदाहृतम्। चतुर्नवतिरेवोक्तद्वद् द्व्यूचास्वसंशयः॥९॥
काकुभानां तु पञ्चाशद् विज्ञेया पञ्चसंयुता। महाबार्हत एवैकः एवं साधंशतद्वयम्॥१०॥
एवं दशसहस्राणि शतानां तु चतुष्टयम्। ऋचां द्व्यधिकमाख्यातमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः॥११

इन श्लोकों के अनुसार ऋग्वेद में गायत्री २४५१, उष्णिक् ३४१, अनुष्टुभ् ८५५, बृहती १८१, पंक्ति ३१२, त्रिष्टुप् ४२५३, जगती १३४८, अतिजगती १७, शक्करी १९, अतिशक्करी ९, अष्टि ६, अत्यष्टि ८४, धृति २, अतिधृति १, एकपदा ६, द्विपदा १७, बार्हतप्रगाथ १९४, काकुभ प्रगाथ ५५, महाबार्हत प्रगाथ १ छन्द हैं। इस प्रकार तत्त्वदर्शी महर्षियों ने ऋग्वेद की समस्त ऋचाओं की संख्या १०४०२ कही है—

छन्दःसंख्या परिशिष्ट में उल्लिखित ऋग्गणना के विषय में पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने ऐतरेयालोचन पृष्ठ १४३ पर लिखा है—

छन्दःसंख्योल्लिखितोक्तसर्वसंकलनसंख्या तु प्रतिछन्दःसंख्यातोऽपि विरुद्धैव प्रतीयते। तद्यथा तत्रोक्तं श्लोकैः—गायत्र्यः २४५१, उष्णिहः ३४१, अनुष्टुभः ८५५, बृहत्यः १८१, पङ्क्तयः ३१२, त्रिष्टुभः ४२५३, जगत्यः १३४८, अतिजगत्यः १७, शक्वर्यः ९, अतिशक्वर्यः ९, अष्टयः ६, अत्यष्टयः ८४, धृत्यौ २, अतिधृतिः १, द्विपदाः १७, एकपदाः ६, बार्हतप्रगाथाः १९४, ककुप्प्रगाथाः ५५, महाबार्हतप्रगाथः १। तदेवं तदुक्तप्रतिच्छन्दःसंख्यानां संकलनया १०१४२ ऋचः स्युः। पूर्वप्रदर्शितश्लोकतस्तु गम्यन्ते १०४०२। तदत्र प्रायः सर्वत्र संकलनभ्रमोऽस्माभिर्ग्रन्थदृष्टया प्रमाणित एव।

अर्थात्—छन्दःसंख्या नाम के परिशिष्ट में कही हुई सब छन्दों की संकलन संख्या (पूर्णयोग) प्रतिच्छन्द दर्शाई हुई छन्दःसंख्या के संकलन (योग) से विरुद्ध ही प्रतीत होती है। जैसा कि श्लोकों में कहा है—गायत्री २४५१·····शक्वरी ९ ·····*। इस प्रकार प्रतिछन्द निर्दिष्ट संख्याओं का संकलन करने से १०१४२ ऋचाएं होती हैं। पूर्वप्रदर्शित (११ वें) श्लोक से १०४०२ संख्या जानी जाती है। इस तरह सर्वत्र संकलन भ्रम हमने ग्रन्थों से प्रमाणित कर दिया।

---

* यहां प्रतिछन्द मन्त्रसंख्या पूर्ववत् समझनी चाहिये। पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने केवल शक्वरी छन्द की संख्या ११ के स्थान में ९ लिखी है।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी के इस लेख पर हमें अत्यन्त आश्चर्य होता है। अन्य आचार्यों के दोष दर्शाने का दुःसाहस और उनका उपहास † करनेवाले पं० सत्यव्रत सामश्रमी को छन्दःसंख्या परिशिष्ट के साधारण श्लोकों का भाव भी भली-भांति समझ में नहीं आया।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने इन श्लोकों के समझने में दो भूलें की हैं। प्रथम भूल—छठे श्लोक के उत्तरार्ध में दो बार 'तथा' शब्द का प्रयोग है। पहला तथा शब्द पूर्वार्धगत अतिजगती की गणनाप्रकार का निर्देशक है। दूसरा 'तथा' शब्द पूर्वोक्त १० संख्या का समुच्चायक है। श्लोक का भाव यह है, जैसे अतिजगती की संख्या १०+७=१७ कही है, वैसे ही शकरी की गणना में भी पूर्व संख्या १० और उत्तर संख्या ९ समझनी चाहिए अर्थात् शकरी छन्द की १०+९=१९ ऋचाएं हैं। पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने 'शक्वर्योऽपि तथैवोक्ताः' चरण का भाव न समझ कर शकरी छन्द की केवल ९ ऋचाएं गिनी हैं। द्वितीय भूल—प्रगाथों की संख्या का निर्देश करते हुए ९ वें श्लोक में स्पष्ट कहा है कि ये प्रगाथ 'द्वृचः' हैं। अतः इन १९४+५५+१=२५० प्रगाथों की ५०० ऋचाएँ गिननी चाहिए। ऋक्सर्वानुक्रमणी के परिभाषा प्रकरण में स्पष्ट कहा है कि बार्हत प्रगाथ=बृहती और सतोबृहती, काकुभ प्रगाथ=ककुप् और सतोबृहती तथा महाबार्हतप्रगाथ=महाबृहती और महासतोबृहतीसंज्ञक छन्दों के योग का नाम है। पाणिनि के 'सोऽस्यादिरितिच्छन्दसः प्रगाथेषु' (अष्टा० ४।२।५५) सूत्र से बार्हत काकुभ आदि में अण्-प्रत्यय इसी अर्थ में होता है*। पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने इस साधारण सी बात को न समझकर २५० प्रगाथों का २५० ऋचायें ही गिन लीं। दोष है अपनी समझ का और मत्थे मढ़ा छन्दःसंख्या-परिशिष्टकार के। यदि पं० सत्यव्रत सामश्रमी की इन दोनों त्रुटियों को ठीक लिया जाए तो छन्दःसंख्या परिशिष्ट की दोनों गणनाओं में परस्पर कोई विरोध नहीं रहता।

पं० हरिप्रसाद जी वैदिकमुनि ने भी छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त ऋग्गणना को नहीं समझा। उन्होने पं० सत्यव्रत सामश्रमी का ही अनुकरण किया है। देखो—वेदसर्वस्व पृष्ठ ६५,६६। अतः उनके लेख में भी पूर्वोक्त दोष समझने चाहिये।

---

† द्रष्टव्य ऐतरेयालोचन पृष्ठ १२७।

* प्रगाथ दो प्रकार के होते हैं एक ऋक्सम्बन्धी, दूसरे सामसम्बधी। पाणिनि का उक्त सूत्र आर्च प्रगाथ संबन्धी है। काशिकाकार ने प्रगाथ का लक्षण 'यत्र द्वे ऋचौ प्रगथनेन तिस्रः क्रियन्ते स प्रगथनात् प्रकर्षगानाद्वा प्रगाथ इत्युच्यते' लिखा है, यह सामसंबन्धी है।

छन्दःसंख्यापरिशिष्ट और द्विपदा ऋचाएं

ध्यान रहे कि छन्दःसंख्या परिशिष्टोक्त १०४०२ ऋचाओं में १४० नैमित्तिक द्विपदाएँ चतुष्पदा बनाकर ७० ऋचाएँ गिनी गई हैं, अत एव यहां जो १७ द्विपदाएं गिनी हैं, वे नित्य द्विपदाएं हैं। यदि ७० चतुष्पदाओं को ७० × २ = १४० द्विपदा बनाकर गिना जाए तो कुल ऋक्संख्या १०४७२ होगी। इसी प्रकार छन्दःसंख्या परिशिष्टोक्त ऋग्गणना में ८० बालखिल्य मन्त्रों का भी समावेश नहीं है। सम्भव है, छन्दःसंख्या परिशिष्ट शैशिरिशाखा का हो। हम पूर्व लिख चुके हैं कि शैशिरि-शाखा में बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं है।

प्रो० मैकडानल्ड ने ऋग्वेद में १२७ द्विपदा ऋचाएँ गिनी हैं (उनकी गणना में जो भूल है, उसे आगे व्यक्त किया जाएगा)। उन्होंने छन्दःसंख्या परिशिष्ट में द्विपदाओं १७ संख्या देखकर कल्पना की है कि छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त द्विपदा संख्या में मध्यवर्ती २ की संख्या नष्ट हो गई है, अर्थात् १२७ के स्थान में भूल से १७ लिखी गई। देखो, ऋक्सर्वानुक्रमणी की भूमिका पृष्ठ १८।

प्रो० मैकडानल्ड की यह कल्पना सर्वथा अयुक्त है क्योंकि हम ऊपर सप्रमाण दर्शा चुके हैं कि ऋग्वेद में १४० नैमित्तिक द्विपदाएँ हैं और १७ नित्य द्विपदाएं। छन्दःसंख्या परिशिष्ट में केवल नित्य द्विपदाओं का उल्लेख है, नैमित्तिक द्विपदाओं का नहीं। मैकडानल्ड ने स्वयं अशुद्ध गिनी हुई १२७ द्विपदा संख्या में छन्दः-संख्या परिशिष्टोक्त १७ द्विपदा संख्या में आद्यन्त संख्या (१ और ७) की समा-नता देखकर आश्चर्यजनक कल्पना की है।

ऋक्सर्वानुक्रमणी और ऋक्संख्या

आचार्य कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में प्रतिसूक्त जो ऋक्संख्या लिखी है, उसका योग करने पर बालखिल्य सूक्तों के विना १०४७२ ऋचाएँ होती हैं*। ११ बालखिल्य सूक्तों के ८० मन्त्र मिलाने पर १०५५२ ऋक्संख्या उपलब्ध होती है। इस संख्या में नैमित्तिक द्विपदाएँ सम्मिलित हैं। ऋक्सर्वानुक्रमणी के टीका-कार जगन्नाथ के मत में भी ऋग्वेद में १०५५२ ऋचाएँ हैं †। चरणव्यूह के टीकाकार महिदास का भी यही निर्णय है। वह लिखता—

---

*ऋक्सर्वानुक्रमणी के दो प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं। एक पाठ में बालखिल्य ऋचाओं के ऋषि, देवता, छन्द का निर्देश मिलता है, दूसरे पाठ में नहीं मिलता। अत एव यहाँ प्रथक् निर्देश किया है।

† ऐतरेयालोचन पृष्ठ १४२, १४३।

बालखिल्यसहिता सर्वानुक्रमणीयमन्त्ररूपीसंख्या उच्यते–द्विपञ्चाशदधिकपञ्चशत-दशसहस्राणीति १०५५२ । बालखिल्यव्यतिरिक्तसंख्या तु द्विसप्तत्यधिकचतुःशतदशसहस्रक् १०४७२ । एतत्संख्या नित्यद्विपदानैमित्तिकद्विपदासहिता । पृष्ठ १७ ।

अर्थात्—बालखिल्य-सहित सर्वानुक्रमणी-निर्दिष्ट मन्त्रसंख्या १०५५२ है, बालखिल्य ऋचाओं के विना १०४७२ । इस संख्या में नित्य और नैमित्तिक दोनों प्रकार की द्विपदा ऋचाएँ सम्मिलित हैं ।

वेङ्कटमाधव और ऋग्वेद की ऋक्संख्या

वेङ्कटमाधव ने ऋग्वेद के दो भाष्य लिखे हैं । एक लघु और दूसरा बृहत्† । वेङ्कटमाधव का काल विक्रम की १२ वीं शताब्दी के लगभग माना जाता है । वेङ्कट ने ऋग्वेद के लघु भाष्य के ५वें अष्टक के ५वें अध्याय के उपोद्घात में ऋग्वेद की ऋक्संख्या का उल्लेख इस प्रकार किया है—

शतैश्चतुर्भिरधिकमयुतं गणितं मया । द्वे च यान्यतिरिच्येते द्विपदाश्चात्र संगता ॥२१॥
पृथक् यदा तु गणनं द्विपदानां तदाधिकाः । चतुःशतादशीतिश्च वाक्यं च ग्रहवानयम् ॥२२

अर्थात्—मैंने ऋग्वेद में १०४०२ ऋचाएँ गिनी हैं । इनमें द्विपदाएँ सम्मिलित हैं । जब द्विपदाएँ पृथक् गिनी जाती हैं तब १०४८० ऋचाएँ होती हैं ।

वेङ्कटमाधव ने १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा मानकर जो १०४०२ ऋक्संख्या लिखी है, वह ठीक है, परन्तु द्विपदाओं को पृथक् गिनकर जो १०४८० ऋक्संख्या लिखी है, वह ठीक नहीं, क्योंकि जब द्विपदाएँ पृथक् गिनी जाएँगी तब नैमित्तिक द्विपदाओं की केवल ७० संख्या बढ़ेगी, जो कि पहली गणना में चतुष्पदा बनाकर गिनी गई है । अतः १४० द्विपदाओं की आधी संख्या ७० ही बढ़ानी चाहिए । इसलिए वेङ्कटमाधव का १०४७२ के स्थान में १०४८० संख्या लिखना भूल है ।

वेङ्कटमाधव की भूल का कारण

हम ऊपर कह आए हैं कि ऋग्वेद में १४० नैमित्तिक और १७ नित्य द्विपदाएँ हैं अर्थात् समस्त द्विपदाएँ १५७ हैं । गणना-भेद से केवल नैमित्तिक द्विपदा-जन्य संख्या बढ़ेगी, नित्य द्विपदाओं की संख्या तो दोनों गणनाओं में समान रहेगी । प्रतीत होता है कि वेङ्कटमाधव ने १०४०२ ऋक्संख्या में भूल से समस्त (नित्यनैमित्तिक) १५७ द्विपदाओं में से १५६ सम ऋचाओं की (१५६÷२ =) ७८ चतुष्पदा ऋचाएँ सम्मिलित समझ लीं । अत एव जब उसने द्विपदाओं को

† देखो श्री पं० भगवद्दत्तजी कृत वैदिक वाङ्मय का इतिहास भाग १ खण्ड २ पृष्ठ ३६ ।

पृथक् गिना तब पूर्वोक्त १४०÷२=७० के स्थान में ७८ संख्या को द्विगुणित कर दिया। यह वेङ्कटमाधव की महती भूल है।

इसके आगे २३, २४, २५ श्लोकों में वेङ्कटमाधव वर्गानुसार ऋक्संख्या का उल्लेख करता है, जो इस प्रकार है—

प्रतिवर्ग ऋक्संख्या		वर्गसंख्या		ऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	९९	=	२९७
४	×	१७५	=	७००
५	×	१२०९	=	६०४५
६	×	३४३	=	२०५८
७	×	१२१	=	८४७
८	×	५४	=	४३२
९	×	२	=	१८
योग		२००६		१०४०२

तदनुसार ऋग्वेद में २००६ वर्ग और १०४०२ ऋचाएं होती हैं। वर्गसंख्या तो शौनकीय अनुवाकानुक्रमणी से मिलती है परन्तु मन्त्रसंख्यानुसार निर्दिष्ट वर्गसंख्या में पर्याप्त भेद है। हाँ, वेङ्कटमाधव की दोनों (प्रतिवर्गगणना और समस्त गणना की) ऋक्संख्याएं परस्पर अवश्य मिलती हैं।

वह आगे लिखता है—

ऋचां दश सहस्राणि ऋचां पञ्च शतानि च। ऋचामशीतिः पादश्च पाठोऽयं न समञ्जसः॥

अर्थात्—अनुवाकानुक्रमणी आदि में ऋग्वेद की जो १०५८० और १ पाद ऋग्गणना लिखी है, वह ठीक नहीं है।

वेङ्कटमाधव ने केवल स्वसंख्यात ऋक्संख्या के आधार पर अनुवाकानुक्रमणी आदि निदिष्ट "१०५८० और १ पाद" ऋक्संख्या को अशुद्ध बताया है। प्रतीत होता है, उसने उसके "पारणम्" पद पर किञ्चिन्मात्र ध्यान नहीं दिया, अन्यथा वह इस संख्या को अशुद्ध कहने का साहस न करता।

महीदास और ऋग्वेद की ऋक्संख्या

चरणव्यूह के टीकाकार महीदास ने ऋग्वेद की ऋग्गणना के विषय में कुछ विस्तार से लिखा है। यद्यपि इस ग्रन्थ के अत्यधिक अशुद्ध मुद्रित होने के कारण

अनेक स्थानों में उसका वास्तविक अभिप्राय पूर्णतया समझ में नहीं आता, तथापि उससे ऋग्वेद की ऋग्गणना-सम्बन्धी अनेक ज्ञातव्य बातें विदित होती हैं।

महीदास के मत में ऋग्वेद में बालखिल्य-सहित १०५५२ मन्त्र हैं, बालखिल्य के विना १०४७२। इन में नित्य और नैमित्तिक दोनों प्रकार की द्विपदाएँ सम्मिलित हैं। पृष्ठ १७।

आगे (पृष्ठ २१ पर) महीदास १०५८० और १ पाद ऋक्परिमाण की उपपत्ति दर्शाता है। वह हम पूर्व (पृष्ठ७) लिख चुके।

आगे (पृष्ठ २४, २५ पर) महीदास ऋग्वेद के वर्गों तथा ऋचाओं की संख्या प्रदर्शक कुछ श्लोक उद्धृत करता है, जो इस प्रकार हैं—

एकर्चं एकवर्गश्च एकर्चं नवकस्तथा। द्वौ वर्गौ द्वृचौ ज्ञेयौ ऋक्त्रयस्य शतं स्मृतम्॥
चतुर्ऋचां पञ्चसप्तत्यधिकं च शतं तथा। पंचर्चं तु द्विशतकं सहस्रं रुद्रसंयुतम्॥
पञ्चचत्वार्यधिकं तु षड्ऋचां तु शतत्रयम्। सप्तऋचां शतं ज्ञेय विंशतिश्चाधिकाः स्मृताः॥
अष्टर्चां तु पञ्चाशत् पञ्चाधिकास्तथैव च। दशाधिकसहस्रद्वय वर्गाः पञ्चशाखासु निश्चिताः॥
वर्गाः संज्ञानसूक्तस्य चत्वारश्चात्र मीलिताः। एवं पारायणे प्रोक्ता ऋचां संख्या न न्यूनतः॥

इन श्लोकों के अनुसार वर्गों और ऋचाओं की संख्या इस प्रकार है—

प्रतिवर्ग ऋक्संख्या		वर्गसंख्या		ऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	२	=	४
३	×	१००	=	३००
४	×	१७५	=	७००
५	×	१२११	=	६०५५
६	×	३४५	=	२०७०
७	×	१२०	=	८४०
८	×	५५	=	४४०
९	×	१	=	९
योग		२०१०		१०४१९

यह वर्गसंख्या शाकलचरण की पाँच शाखाओं की है। इसमें संज्ञान सूक्त के ४ वर्ग सम्मिलित हैं। इसी प्रकार १०४१६ मन्त्रसंख्या में संज्ञान सूक्त की १५ ऋचाओं का भी समावेश है। उन्हें न्यून करने पर १०४०४ ऋक्संख्या उपलब्ध होती है, जो पूर्वोक्त छन्दःसंख्या परिशिष्ट की संख्या से २ संख्या अधिक है। यह अधिकता शाखान्तरकृत प्रतीत होती है।

शौनक, वेङ्कटमाधव और महीदास ने वर्गान्तर्गत ऋक्संख्यानुसार जो वर्ग-संख्या लिखी है, उसमें परस्पर पर्याप्त विभिन्नता है, यह तीनों की वर्गानुसार ऋग्गणना की दी हुई सारणियों की तुलना से व्यक्त है। इन तीनों में से किसकी गणना ठीक है, इसके ज्ञान लिए हमने भी ऋग्वेद की वर्गान्तर्गत ऋक्संख्या के क्रम से वर्गसंख्या की गणना की। गणना करने पर ज्ञात हुआ कि हमारी गणना पूर्वोक्त तीनों गणनाओं से भिन्न है। अतः हमने अपनी गणना की अनेक प्रकार से परीक्षा की, किन्तु हमें उसमें कहीं भूल उपलब्ध नहीं हुई। हमने वर्गगणना तीन प्रकार से की है। एक–द्विपदापक्ष में, दूसरी–नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर, तीसरी–नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर बालखिल्य के ८० मन्त्रों के १८ वर्ग न्यून करके।

नैमित्तिक द्विपदाओं को द्विपदारूप में गिनकर ऋग्वेद की बालखिल्य-सहित समस्त वर्गसंख्या इस प्रकार है—

अष्टक	एकर्च	द्वृच	तृच	चतुर्ऋच	पञ्चर्च	षडर्च	सप्तर्च	अष्टर्च	नवर्च	दशर्च	एकादशर्च	द्वादशर्च	योग
१	१	....	१२	२२	१७३	४२	५	४	....	५	१	....	२६५
२	....	....	१७	१५	१२४	४६	१२	७	....	....	....	....	२२१
३	....	....	४	१६	१३५	४१	२०	९	....	....	....	....	२२५
४	....	....	१२	२६	१५८	२९	१५	१०	....	....	....	....	२५०
५	....	१	१३	१६	१३७	४०	२१	७	....	३	....	....	२३८
६	....	....	११	२८	२०७	५८	१६	१०	....	१	....	....	३३१
७	....	....	८	३६	१५६	३३	१०	२	१	१	....	१	२४८
८	....	....	२३	२१	१२०	५२	२४	६	....	....	....	....	२४६
	१	१	१००	१८०	१२१०	३४१	१२३	५५	१	१०	१	१	२०२४
वालखिल्यान्तर्गत वर्ग	....	....	२	६	१०	....	....	....	....	....	....	....	१८
वालखिल्यातिरिक्त वर्ग	१	१	९८	१७४	१२००	३४१	१२३	५५	१	१०	१	१	२००६

वर्गान्तर्गत ऋक्संख्यानुसार समस्त ऋग्वेद की वर्गसंख्या तथा तदाश्रित ऋक्संख्या इस प्रकार है–

प्रतिवर्ग ऋक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्त ऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	१	=	२
३	×	१००	=	३००
४	×	१८०	=	७२०
५	×	१२१०	=	६०५०
६	×	३४१	=	२०४६
७	×	१२३	=	८६१
८	×	५५	=	४४०
९	×	१	=	९
१०	×	१०	=	१००
११	×	१	=	११
१२	×	१	=	१२
योग		२०२४		१०५५२

ऋग्वेद में आई हुई १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर वर्गसंख्या और तदाश्रित ऋक्संख्या इस प्रकार है—

प्रतिवर्ग ऋक्संख्या		वर्गसंख्या		समस्तऋक्संख्या
१	×	१	=	१
२	×	३	=	६
३	×	१०१	=	३०३
४	×	१७९	=	७१६
५	×	१२१९	=	६०९५
६	×	३४३	=	२०५८
७	×	१२२	=	८५४
८	×	५५	=	४४०
९	×	१	=	९
योग		२०२४		१०४८२

१४० नैमित्तिक द्विपदाओं की दो दो ऋचाओं को एक चतुष्पदा मानकर १४०÷२=७० चतुष्पदाएँ होती है। अतः इस गणना में वर्गसंख्या तो वही २०२४ है, परन्तु ऋक्संख्या में ७० संख्या न्यून हो गई है।

यदि नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा गिनकर दर्शाई हुई उपर्युक्त वर्गसंख्या में से बालखिल्यान्तर्गत १८ वर्ग और उनकी ८० ऋचाएँ न्यून कर दें तो वर्गसंख्या और ऋक्संख्या निम्न लिखित होगी —

प्रतिवर्ग ऋक्०	वर्गसंख्या	समस्तऋक्०	प्रतिवर्ग ऋक्०	वर्गसंख्या	समस्तऋक्०
१	१	१	६	३४३	२०५८
२	३	६	७	१२२	८५४
३	९९	२९७	८	५५	४४०
४	१७३	६९२	९	१	९
५	१२०९	६०४५	योग	२००६	१०४०२

अब हम क्रमशः शौनक, वेङ्कटमाधव, अपनी और महिदास की वर्गगणना नीचे लिखते हैं, जिससे प्रत्येक की वर्गगणना में जो भेद हैं, वह व्यक्त हो जाएगा शौनक और वेङ्कटमाधव ने जो वर्गगणना लिखी है, उसमें १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा बनाकर गणना की है, और उसमें बालखिल्य ऋचाओं की गणना नहीं है। अतः हमने तुलना के लिए अपनी वर्गगणना भी इसी प्रकार की लिखी है। यह भी ध्यान रहे कि महीदास की वर्गगणना शाकलचरण की पांच संहिताओं की है। यह हम उसी के शब्दों में पूर्व लिख चुके हैं, परन्तु उसकी गणना में भी बालखिल्य ऋचाओं का समावेश नहीं है।

प्रतिवर्ग	ऋक्संख्या शौनक	वेङ्कटमाधव	हमारी गणना	महिदास
१	१	१	१	१
२	२	२	३	२
३	९७	९९	९९	१००
४	१७४	१७५	१७३	१७५
५	१२०७	१२०९	१२०९	१२११
६	३४६	३४३	३४३	३४५
७	११९	१२१	१२२	१२०
८	५९	५४	५५	५५
९	१	२	१	१
योग	२००६	२००६	२००६	२०१०

हमारा विचार है कि चारों की वर्गसंख्याओं में जो विभिन्नता है, उसका कारण शाखाभेद है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती और ऋग्वेद की ऋसंख्या

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने ऋग्वेदभाष्य के उपोद्घात में ऋग्वेद की ऋक्संख्या का उल्लेख किया है। उन्होंने प्रतिमण्डल जो ऋक्संख्याएँ लिखी हैं, उनका योग क्रमशः इस प्रकार है—

१९७६+४२९+६१७+५८९+७२७+७६५+८४१+१७२६+१०९७ +१७५४ = १०५२१।

इस प्रतिमण्डल ऋक्संख्या में लेखक के प्रमाद से दो अशुद्धियाँ हुई हैं। प्रथम—ऋग्वेद के आठवें मण्डल के २४ वें सूक्त की मन्त्रसंख्या २६ के स्थान में ३६ लिखी है, अत एव उसका योग भी १७१६ के स्थान में १७२६ हो गया है अर्थात् यहाँ १० संख्या अधिक गिनी गई है। वस्तुतः इस मण्डल की ऋक्संख्या १७१६ होनी चाहिए। द्वितीय—नवम मण्डल की प्रतिसूक्त लिखित संख्या के योग में ११ संख्या न्यून है। प्रतीत होता है, योग करते समय किसी सूक्त की ११ ऋचाएँ गिनने से रह गई। अतः इस मण्डल की ऋचाओं का योग १०९७ के स्थान में ११०८ होना चाहिए। इस प्रकार यदि अष्टम और नवम मण्डल के योग को शुद्ध कर लिया जाए तो उन का पूर्णयोग १०५२२ होगा।

यह योग मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के अनुसार है। हम पूर्व लिख चुके हैं कि मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में प्रथम मण्डल की ६० नैमित्तिक द्विपदाएँ ३० चतुष्पदा बनाकर छापी गई हैं (शेष ८० द्विपदारूप में ही छापी हैं)। अतः १०५२२ संख्या में प्रथम मण्डलस्थ द्विपदाओं की शेष ३० संख्या और सम्मिलित कर ली जाए तो सर्वयोग १०५५२ होगा। इसमें नित्य नैमित्तिक द्विपदाएँ तथा बालखिल्य ऋचाएँ सम्मिलित हैं। यह संख्या ऋक्सर्वानुक्रमणी, उसके टीकाकार जगन्नाथ, चरणव्यूहटीकाकार महिदास और छन्दःसंख्या-परिशिष्ट की दी हुई ऋक्संख्या से पूर्णतया मिल जाती है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने प्रतिमण्डल ऋक्संख्या का पृथक्-पृथक् उल्लेख करके अन्त में समस्त ऋचाओं का योग अक्षरों और अङ्कों दोनों में १०५८९ लिखा है। इस अशुद्धि का कारण भी लेखक-प्रमाद ही है। प्रतीत होता है प्रतिलिपि करते समय लेखक ने अङ्कों में लिखे गये १०५२१ योग में २ को ८ और १ को ९ पढ़ लिया होगा और पूर्णयोग १०५८९ लिख दिया होगा। शीघ्रता में लिखी गई संख्याओं के पढ़ने में प्रायः ऐसी भूलें हो जाती हैं।

श्री० पं० भगवद्दत्त जी ने "वैदिक वाङ्मय का इतिहास" के प्रथम भाग पृष्ठ १३७ पर स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ और १०५८९ दोनों संख्याओं में सामञ्जस्य दर्शाने का प्रयत्न किया है। उनका लेख इस प्रकार है--

स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ गणना में यदि नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं का आधा अर्थात् $\frac{१४०}{२} = ७०$, और इनमें से ऋ० ५।२४ की कम करके (जो पहले ही द्विगुणित हैं) ६८ जोड़ी जाएँ तो कुल संख्या १०५८९ हो जाती है।

यद्यपि यह समाधान साधारण दृष्टि से पूर्ण संतोषजनक प्रतीत होता है, तथापि इस पर गहराई से विचारने पर इसमें दो भूलें उपलब्ध होती हैं। प्रथम--पण्डितजी ने उक्त समाधान करते समय इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि १०५२१ (१०५२२) संख्या में कितनी द्विपदाएँ द्विपदारूप में गिनी गई हैं और कितनी द्विपदाएँ चतुष्पदाएँ बनाकर आधी गिनी गई हैं। उन्होंने भी मैक्समूलर सम्पादित ऋक्संस्करण या तदाश्रित अन्य संस्करण को ही प्रमाण मानकर सामञ्जस्य दर्शाने का प्रयत्न किया है। वस्तुतः जिस प्रकार उन्होंने ऋ० ५।२४ के दो मन्त्रों को, जिन्हें प्रथम ही द्विपदा मानकर ४ ऋचाएँ गिना गया है, पुनः द्विगुणित करने में छोड़ दिया। इसी प्रकार प्रथम और पञ्चम मण्डलातिरिक्त ७६ नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं को (जिन्हें मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में द्विपदारूप में ही छापा है) भी पुनः द्विगुणित नहीं करना चाहिए था। केवल प्रथम मण्डल की द्विपदाएँ, जो ३० चतुष्पदा बनाकर छापी गई हैं, पुनः द्विगुणित करनी चाहिए थीं।

द्वितीय—पण्डित जी ऋ० ५।२४ के विषय में लिखते हैं—

ऋग्वेद ५।२४ में दो ऋचाएँ हैं, वे द्विपदा हैं, परन्तु ऋग्वेद में प्रथम के आगे १।२ और दूसरी के आगे ३।४ लिखा गया है अर्थात् ये पहिले ही द्विगुणित कर दी गई हैं।

इस लेख में उन्होंने ऋग्वेद ५।२२ की मैक्समूलरीय संस्करण में यथामुद्रित दो ऋचाओं को द्विपदा लिखा है। ये मन्त्र जिस रूप में छपे हैं, उस रूप में द्विपदा नहीं हैं। इन मन्त्रों का मुद्रित पाठ इस प्रकार—

अग्ने त्वं नो अन्तम उत त्राता शिवो भवा वरूथ्यः ।
वसुरग्निर्वसुश्रवा अच्छा नक्षि द्युमत्तम रयिं दाः ॥१।२॥
स नो बोधि श्रुधी हवमुरुष्या णो अघायतः समस्मात्।
तं त्वा शोचिष्ट दीदिवः सुम्नाय नूनमीमहे सखिभ्यः ॥३।४॥

यहाँ प्रत्यक्ष ही दोनों मन्त्रों में चार-चार पाद विद्यमान हैं, अतः ये ऋचाएँ चतुष्पदा हैं। ऋक्सर्वानुक्रमणी में इन्हें चार द्विपदाएं माना है। मैक्समूलर ने यहाँ भी प्रथम मण्डल के सदृश ४ द्विपदाओं को २ चतुष्पदा बनाकर छापा है, परन्तु सर्वानुक्रमणी-प्रतिपादित वन्धु आदि ४ ऋषियों का प्रतिद्विपदा-संबन्ध दर्शाने के लिए प्रथम मन्त्र के आगे १।२ और द्वितीय मन्त्र के आगे ३।४ संख्या छाप दी। अत एव इस संख्या से इन दो मन्त्रों को द्विपदा मानकर प्रथम ही द्विगुणित समझना ठीक नहीं है। सम्भव है पण्डित जी को यह भ्रान्ति वेदसर्वस्व पृष्ठ ६७ के लेख से हुई होगी। पण्डित जी की इस भ्रान्ति में प्रो० मैकडानल भी सम्मिलित हो गए, यह हम आगे दर्शाएंगे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती की १०५२१ और १०५८९ संख्या में कोई सामञ्जस्य नहीं बनता। वस्तुतः दोनों विभिन्न संख्याओं का कारण लेखक-प्रमाद ही है जैसा हम ऊपर दर्शा चुके हैं। इसलिए स्वामी दयानन्द सरस्वती का सर्वयोग भी १०५२२ होना चाहिए।

प्रो० मैकाडनल और ऋग्वेद की ऋक्संख्या

प्रोफेसर मैकडानल ने स्वसम्पादित ऋक्सर्वानुक्रमणी की भूमिका पृष्ठ १७, १८ पर ऋग्वेद की ऋक्संख्या के विषय में कुछ विस्तार से लिखा है। उस लेख में प्रो० मैकडानल ने ऋग्वेद की ऋग्गणना के विषय में सबसे अधिक भूलें की हैं।

पहली भूल—मैकडानल ने प्रतिछन्द ऋक्संख्या का निर्देश करके सर्वयोग १०४४२ लिखा है। इस प्रतिछन्द-संख्या में द्विपदा ऋचाओं का योग १२७ है। प्रथम मण्डल में ३१ द्विपादाएँ लिखी है। कात्यायनकृत सर्वानुक्रमणी के अनुसार प्रथम मण्डल के ६५—७० सूक्त तक ६१ द्विपदा ऋचाएं है। इन ६१ द्विपदाओं में ७० वें सूक्त की ११ वीं ऋचा नित्य द्विपदा है, शेष ६० नैमित्तिक हैं। मैकडानल ने मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के अनुसार ६१ ऋचाओं को ३१ गिन लिया। मैक्समूलर ने ६० द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापा है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं। अतः मैकडानल की लिखी हुई ३१ द्विपदाओं में ३० चतुष्पदाएं हैं और १ द्विपदा। आश्चर्य की बात तो यह है कि मैकडानल ने ऋक्सर्वानुक्रमणी का सम्पादन करते हुए प्रथम मण्डल के ६५—७० सूक्त तक ऋक्सर्वानुक्रमणी और मैक्समूलर-मुद्रित ऋग्वेद में प्रतिसूक्त ऋक्संख्या में भेद देखकर भी मैक्समूलर की द्विपदा-ऋचाओं की मुद्रण-सम्बन्धी भयानक भूल का परिशोध नहीं किया। इससे भी अधिक आश्चर्य इस बात पर है कि उसने

मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में चतुष्पदा बनाकर छापी गईं ऋचाओं को द्विपदा समझकर द्विपदाओं में गणना कर ली। यह है, पाश्चात्य विद्वानों का पाण्डित्य! जिन्हें द्विपदा और चतुष्पदा ऋचाओं के भेद का भी ज्ञान नहीं। अतः प्रथम मण्डल के ६५–७० सूक्त की ऋचाओं को द्विपदा मानकर गिना जाय तो उनकी संख्या ३१ के स्थान में ६१ होगी और द्विपदाओं का सर्वयोग १२७ न होकर १५७ होगा। अत एव मैकडानल्ड का सर्वयोग भी १०४४२ के स्थान में १०४७२ हो जायगा, जो कि सर्वसम्मत है। इसमें बालखिल्य ऋचाएं सम्मिलित नहीं हैं।

दूसरी भूल—मैकडानल लिखता है—"छन्दःसंख्या (परिशिष्ट) में १२७ के स्थान में १७ द्विपाएं गिनी हैं। सम्भव है छन्दःसंख्या की गणना में मध्यवर्ती २ संख्या खण्डित हो गई हो।" मैकडानल की इस कल्पना के विषय में हम पूर्व ही लिख आए हैं। अतः यहाँ पुनः लिखना पिष्टपेषणवत् होगा। प्रतीत होता है कि मैकडानल को द्विपदाओं के नित्य और नैमित्तिक भेदों का कुछ भी ज्ञान नहीं था, अन्यथा वह छन्दःसंख्योक्त १७ नित्य द्विपदाओं के विषय में इस प्रकार की कल्पना कदापि न करता।

तीसरी भूल—मैकडानल्ड लिखता है—"ऋग्वेद की शाकल संहिता की ऋचाओं का सर्वयोग १०४४२ होता है जब कि छन्दःसंख्या में १०४०२ है।" ऋक्सर्वा० की भूमिका पृष्ठ १७।

छन्दःसंख्या-परिशिष्ट का १०४०२ योग १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को ७० चतुष्पदा गिनकर लिखा गया है, यह हम पूर्व दर्शा चुके हैं। तदनुसार द्विपदा-पक्ष में वह योग १०४७२ होगा। मैकडानल के योग में प्रथम मण्डलस्थ द्विपदाओं की गणना में जो ३० संख्या की भूल हमने ऊपर दर्शाई है, उसे ठीक करने पर उसका योग भी १०४७२ होगा। अतः छन्दःसंख्या-परिशिष्टोक्त १०४०२ संख्या के गणना-प्रकार को न समझकर उसमें भिन्नता दर्शाना तीसरी भूल है।

चौथी भूल—मैकडानल लिखता—"१२७ द्विपदाओं को दूसरी बार गिनकर मेरा योग (१०४४२ + १२७) = १०५६९ होता है।" ऋक्सर्वा० भूमिका पृष्ठ १८।

कात्यायन के "द्विर्द्विपदास्तृचः समामनन्ति" इस परिभाषा-सूत्र का षड्गुरुशिष्य की वृत्ति-सहित शुद्ध अर्थ हम पूर्व लिख चुके हैं। तदनुसार यज्ञकाल में द्विपदारूप में प्रयुक्त होनेवाली (१४० ऋचाएँ दो दो ऋचाएँ मिल कर अध्ययन-काल में एक चतुष्पदा ऋक् बनती है। मैकाडानल के उपर्युक्त लेख को देखने से

39736

विदित होता है कि उसने कात्यायन के इस सूत्र का वास्तविक अर्थ ही नहीं समझा, अत एव उसने द्विपदारूप से गिनी गई ऋचाओं को पुनः द्विगुणित करके १०४४२ में १२७ संख्या और जोड़ दी, जो सर्वथा अयुक्त है।

पाँचवीं भूल—पं० भगवद्दत्त जी को ऋग्वेद की ५।२४ के विषय में जो भ्रान्ति हुई, उसका उल्लेख हम पूर्व कर आए हैं। उन्होंने ऋग्वेद ५।२४ के विषय में १६-७-१९१९ को एक पत्र प्रो० मैकडानल को लिखा था। उसके उत्तर में ८ ८-१९१९ को मैकडानल ने लिखा है—

"मुझे यह प्रश्न समझ में नहीं आता कि ऋ० ५।२४ की दो द्विपदा ऋचाओं को सर्वानुक्रमणी में ही क्यों द्विगुणित कर दिया..... किसी दशा में ५।२४ की द्विपदाओं को द्विगुणित करना ठीक प्रतीत नहीं होता। ऐसा करने से मेरी मन्त्रगणना (१०५६७ के स्थान में) १०५६५ हो जाएगी।। देखो वैदिक वाङ्मय का इतिहास भाग १, पृष्ठ १३६।

इस लेख से स्पष्ट है कि मैकडानल ने भी पं० भगवद्दत्त जी के कथन को स्वीकार कर लिया। सम्भव उसने भी ऋ० ५।२४ की ऋचाओं को पुस्तक खोलकर नहीं देखा, या उसे द्विपदा और चतुष्पदा के भेद का बोध न रहा हो। "सर्वानुक्रमणी में ५।२४ की दो द्विपदाओं को क्यों द्विगुणित कर दिया" यह लिखना भी अयुक्त है। सर्वानुक्रमणी में द्विपदाओं को द्विगुणित नहीं किया अपितु उन्हें ४ द्विपदा लिखा है, जो उचित है। प्रो० मैकडानल को यह भूल मैक्समूलर के ऋक्संस्करण से हुई है, इसका वर्णन हम विस्तार से पूर्व कर चुके हैं। यहां पर मैकडानल ने एक और भारी भूल की है। उसके कथनानुसार ऋक्सर्वानुक्रमणी में ५।२४ की दो ऋचाओं को द्विगुणित किया है। अतः उसके द्विगुणितत्व को हटाने के लिए दो संख्या न्यून करनी चाहिए थी, परन्तु उसने दो के स्थान में ४ चार संख्या न्यून कर दीं।

पाठक इस प्रकरण को भले प्रकार समझें और देखें कि योरुप के प्रामाणिक माने हुए वैदिक विद्वानों ने द्विपदा ऋचाओं का वास्तविक स्वरूप न समझकर कितनी भयङ्कर भूलें की हैं। भूल होना मनुष्य का स्वभाव है, यह सर्वथा दोषावह नहीं। हमारा कहना तो इतना ही है कि जो लोग योरोपियन विद्वानों के लेख को प्रामाणिक मानकर स्वयं आँख मींचकर उनका अन्ध अनुकरण करते हैं, वे स्वयं धोखे में रहते हैं, इसमें किञ्चिन्मात्र सन्देह नहीं। यह ठीक है कि इन योरोपियन विद्वानों ने वेद के विषय में जितना परिश्रम किया, उतना एतद्देशीय विद्वानों ने नहीं किया और न ही करते हैं, परन्तु इस विषय में यह भी ध्यान रखना

चाहिए कि योरोपियन विद्वानों को कार्य करने में जितनी सुविधाएं प्राप्त हैं, एतद्देशीय विद्वानों को उनका शतांश भी प्राप्त नही है। यहाँ के विद्वानों को तो हर समय रोटी की ही चिन्ता लगी रहती है, फिर वे रोटी के लिए प्रयत्न करें या वेद के लिए। यह प्रत्येक विज्ञ पाठक विचार सकता है।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी और ऋग्वेद की ऋक्संख्या

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने ऋग्वेद की ऋक्संख्या के विषय में ऐतरेयालोचन के पृष्ठ १४२, १४३ पर कुछ लिखा है। उसमें उन्होंने भी अनेक भूलें की हैं। उनमें से सबसे प्रधान भूल छन्दःसंख्या-परिशिष्ट-उल्लिखित ऋग्गणना के विषय में है। इसके विषय में हम पूर्व लिख चुके हैं। अतः उसका यहां पुनः पिष्टपेषण करना उचित नहीं।

ऐतरेयालोचन पृष्ठ १४३ पर लिखा है—

अस्मत्परिगणनया त्वाश्वलायनसंहितायाम् १०५२२ ऋचो दृश्यन्ते।

पुनः आगे लिखा है—

तद्वालखिल्यसहिता १०५२२ ऋचः श्रूयन्ते इति त्वस्माभिः सुनिश्चितम्।

अर्थात् ऋग्वेद की आश्वलायन शाखा में बालखिल्यसहित १०५२२ ऋचायें हैं, यह सुनिश्चत है।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी ने यहां दो भूलें की हैं। एक ऋग्वेद की वर्त्तमान संहिता को आश्वलायनी लिखा है, वह अयुक्त है, वह वस्तुतः शाकल संहिता है। इस पर हम पुनः कभी लिखेंगे। दूसरी—पण्डित जी ने बालखिल्य-सहित जो १०५२२ सुनिश्चित ऋक्संख्या लिखी है, वह भी अयुक्त है। उनकी गणना का आधार भी मैक्समूलर सम्पादित या तदाश्रित अन्य ऋक्संस्करण है। मैक्समूलर के ऋक्संस्करण में प्रथम मंडल को ६० द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा बनाकर छापा है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं। अत एव उसके अनुसार ऋग्गणना करने में पं० सत्यव्रत सामश्रमी की सुनिश्चित ऋक्संख्या में भी ३० की न्यूनता रह गई। इसलिये उनकी पूर्ण संख्या भी १०५५२ होनी चाहिए।

पं० हरिप्रसाद और ऋग्वेद की ऋक्संख्या

पं० हरिप्रसाद ने अपने वेदसर्वस्व ग्रन्थ में पृष्ठ ६५-६८ तक ऋग्वेद की मन्त्र संख्या के विषय में लिखा है। उनका समग्र लेख प्रायः पं० सत्यव्रत सामश्रमी के संस्कृत लेख का भाषानुवादमात्र है। अतः उनके लेख में भी वे समस्त दोष विद्यमान है जो उनके आधारभूत पं० सत्यव्रत सामश्रमी के लेख में हैं। इसलिये उन

पर पुनः लिखना पिष्टपेषणवत् होगा। हां, उनके लेख में जो नए दोष हैं, उनका कुछ निदर्शन हम यहां कराते हैं—

पं० हरिप्रसाद ने वेदसर्वस्व पृष्ठ ६७ पर लिखा है—

चरणव्यूह के टीकाकार महीदास ने ऋग्वेदमन्त्रों की संख्या दस हजार चार सौ बहत्तर (१०४७२) लिखी है परन्तु यह नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं सहित है, जिनकी सख्या एक सौ चालीस होती है। यदि वह निकाल दी जाए तो शेष संख्या दस हजार तीन सौ बत्तीस (१०३३२) रह जाती है।

इस लेख से विदित होता है कि पं० हरिप्रसाद ने न तो द्विपदा ऋचाओं का स्वरूप ही समझा और नाहीं महिदास का ऋग्गणना-प्रकार। १४० नैमित्तिक द्विपदाओं की ७० चतुष्पदा ऋचाएँ बनती हैं। अतः यदि नैमितिकद्विपदात्व ही न्यून करना है तो ७० संख्या न्यून करनी चाहिए। पूरी १४० द्विपदाओं को निकालना किसी प्रकार उचित नहीं है।

पुनः आगे लिखा है—

वर्तमान ऋग्वेद संहिता में मन्त्रों की संख्या दस हजार चार सौ चालीस (१०४४०) है। पाँचवें मण्डल में चौवीसवाँ सूक्त दो मन्त्रों का है। सर्वानुक्रमणी के मतानुसार वह चार मन्त्रों का है। सर्वानुक्रमणी के मतानुसार दो संख्या बढ़ा दी जाए तो १०४४२ संख्या हो जाती है।

पं० हरिप्रसाद ने १०४४० संख्या मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के अनुसार दी है। अतः उसके कारण होनेवाली ३० संख्या की भूल इसमें भी है। इसी प्रकार ऋ० ५।२४ के मन्त्रों का क्या स्वरूप है, यह भी उन्होंने स्पष्ट नहीं किया। पं० हरिप्रसाद ने उन्हें दो ही मन्त्र गिना है। अतः उसमें भी द्विपदापक्ष में दो संख्या की कमी है। यदि इन सब न्यूनताओं को पूरा कर दिया जाए तो वही १०४४० + ३० + २ = १०४७२ संख्या उपलब्ध होती है। यह संख्या वालखिल्य ऋचाओं के विना है, यह हम पूर्व लिख चुके हैं।

श्री पं० विश्वबन्धुजी और ऋग्वेद की ऋग्गणना

यद्यपि श्री पं० विश्वबन्धुजी ने ऋग्वेद की ऋग्गणना पर साक्षात् कुछ नहीं लिखा, तथापि उनके द्वारा सम्पादित और विश्वेश्वरानन्द वैदिक अनुसंधान-विभाग (भूतपूर्व लाहौर, वर्तमान होशियारपुर) द्वारा प्रकाशित संहितापदानुक्रम-कोष के अवलोकन से प्रतीत होता है कि उन्होंने भी मैक्समूलर के ऋक्संस्करण को प्रामाणिक मानकर अपना कोष बनाया है। अत एव उनके कोष में भी ऋग्वेद

प्रथम मण्डल के ६५-७० सूक्त तक की ६० नैमित्तिक द्विपदा ऋचाओं के सब पदों के पते अशुद्ध हो गए। यथा—

पद	पदानुक्रम का स्थान निर्देश	शुद्ध स्थाननिर्देश
अप्सु	१।६५।५॥	१।६५।९॥
अजः	१।६७।३॥	१।६७।५॥
अमृतम्	१।६८।२॥	१।६८।४॥
अग्निः	१।६९।३॥	१।६९।६॥
अद्रौ	१।७०।२॥	१।७०।४॥

इसका कारण यह है कि उन्होंने मैक्समूलर के ऋक्संस्करण के आधार पर प्रथम मण्डल की ६० नैमित्तिक द्विपदाओं को ३० चतुष्पदा मानकर स्थान-निर्देश किया है, परन्तु अन्य मण्डलों की अवशिष्ट ८० नैमित्तक द्विपदाओं के पदों का स्थाननिर्देश द्विपदा मानकर ही किया है। आश्चर्य का विषय तो यह है कि श्री पं० सातवलेकर जी द्वारा प्रकाशित ऋग्वेद का सर्वोत्तम संस्करण उक्त पदानुक्रम-कोष के प्रकाशित होने से कई वर्ष पूर्व मुद्रित हो चुका था और उसमें मैक्समूलर के इस महान् दोष का परिमार्जन भी किया जा चुका था, तथापि पं० विश्वबन्धु जी ने इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया और मैक्समूलर द्वारा स्वीकृत अर्धजरतीयन्याय को ही अपना लिया।

वस्तुतः हम लोग अपनी भारतीय प्राचीन परिपाटी को छोड़कर योरपियन विद्वानों का सर्वत्र एकान्त प्रमाण मानकर इस प्रकार की एक नहीं अनेक भयङ्कर भूलें प्रतिदिन कर रहे हैं। इनका परिमार्जन तभी होगा जब हम योरपियन दृष्टिकोण को छोड़कर और उनके लेखों को एकान्त प्रमाण न मानकर प्रत्येक विषय में अपने भारतीय दृष्टिकोण से विचार करेंगे।

उपसंहार

इस प्रकार हमने ऋग्वेद की मन्त्रगणना के सम्बन्ध में प्राचीन और आर्वाचीन सब विद्वानों के मतों की समालोचना, उनकी भूलों का निदर्शन और उनका परिशोधन करते हुए ऋग्वेद की शुद्ध ऋक्संख्या दर्शाने का प्रयत्न किया है। हमारे सारे लेख का सार इस प्रकार है—

कात्यायनकृत ऋक्सर्वानुक्रमणी के अनुसार बालखिल्य और नैमित्तिक द्विपदाओं सहित ऋग्वेद की ऋक्संख्या १०५५२ है। यदि अध्ययन-काल में १४० नैमित्तिक द्विपदाओं को चतुष्पदा बनाकर गिना जाए तो १४०÷२=७० संख्या न्यून करके १०४८२ ऋक्संख्या होगी। यद्यपि इन दोनों ऋक्संख्याओं में ७०

INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc No 39936
23.672

संख्या का अन्तर दीखता है तथापि पद, अक्षर, मात्रा आदि के परिमाण में कुछ भी न्यूनाधिक्य नहीं है। केवल ऋचाओं के गणना-भेद से ७० संख्या का भेद दिखाई पड़ता है।

ऋग्वेद का शुद्ध संस्करण

हम प्रथम लिख चुके हैं कि मैक्समूलर का ऋक्संस्करण उसके महान् परिश्रम का फल है परन्तु उसमें कई दोष हैं। उनमें सबसे महान् दोष नैमित्तिक द्विपदाओं को तीन प्रकार से छापना है। इसी दोष के कारण कई विद्वान् ऋग्वेद की शुद्ध ऋक्संख्या का निर्णय नहीं कर पाए। हमें यह कहते हुए अत्यन्त प्रसन्नता होती है कि पं० सातवलेकरजी (औंध) द्वारा प्रकाशित ऋग्वेद का द्वितीय संस्करण अभी तक प्रकाशित समस्त संस्करणों में श्रेष्ठतम है। इसके लिये पं० सातवलेकरजी वस्तुतः धन्यवाद के योग्य हैं।

ऋग्वेदीय देवता-निर्देश में पं० सातवलेकर ने कहीं-कहीं कात्यायनीय ऋक्सर्वानुक्रमणी की व्यवस्था में जानबूझकर परिवर्तन किया है, यदि वह परिवर्तन न किया होता तो ऋग्वेद का यह संस्करण कात्यायन सम्प्रदायानुसार आदर्श संस्करण होता। इतनी न्यूनता होने पर भी यह कहना ही पड़ेगा कि यह संस्करण सर्वोत्तम है, मन्त्रपाठ अत्यन्त शुद्ध है। जिस प्रकार प्रो० मैक्समूलर का ऋक्संस्करण ६०-७० वर्ष तक प्रामाणिक माना जाना रहा, तद्वत् यह संस्करण भी तब तक गुणग्राही योग्य विद्वानों के हाथ का भूषण रहेगा जब तक कोई इससे भी उत्तम संस्करण प्रकाशित न कर दे। वस्तुतः मैक्समूलर का ऋक्संस्करण पं० सातवलेकर के ऋक्संस्करण के आगे आदरणीय नहीं रहा।

पं० सातवलेकर के द्वितीय संस्करण में मन्त्र-पाठ की शुद्धता के अतिरिक्त अनेक विशेषताएँ हैं। आद्यन्त में अनेक ऋग्वेद-संम्बन्धी ज्ञातव्य विषयों का सन्निवेश परिशिष्टों में किया है। सबसे अधिक प्रसन्नता की बात यह है कि ऋग्वेद के इस संस्करण में ऋचाओं का पूर्ण योग वही १०५५२ दिया है, जो कि इस लेख में पूर्ण विवेचना द्वारा निश्चित किया गया है।

अन्त में वैदिक विद्वानों से प्रार्थना है कि इस लेख में यदि कोई त्रुटि रही हो कृपा करके उसे दर्शाने का प्रयत्न करें, जिससे यह विषय अधिक विस्पष्ट हो सके।

Library IIAS, Shimla
S 294.111 M 651 R
00039936